International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

मीडिया का नया लोकतंत्र

डॉ शशि रानी, एसोसिएट प्रोफेसर

डॉ भीमराव अंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रारूप लोकतंत्र में मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका है लेकिन यह भूमिका वह तभी निभा पाता है जब वह स्वतंत्र होता है। मीडिया का इतिहास इस बात का साक्षी है कि ब्रिटिश शासन के तमाम अवरोधों, प्रताड़नाओं और अंकुश के बावजूद उस समय के पत्रकारों और संपादकों ने अपना अस्तित्व संकट में डाल कर लोक जागरण में विशिष्ट भूमिका निभायी।सरकार को प्रेस की आजादी का सबसे बड़ा शत्रु माना जाता है परंतु उदारवाद,निजीकरण और वैश्वीकरण के इस युग में बाजार, मीडिया मालिक और स्वयं मीडिया भी उतने ही बड़े शत्रु हैं। सरकार के आदेशों की तो अवेहलना संभव है लेकिन मालिक और बाजार हमेशा मीडिया की नाक में नकेल का काम करते हैं।

आज पाठक, दर्शक और श्रोता मीडिया का प्रोडक्ट बन चुके हैं। मीडिया का बाजार उसका विज्ञापनदाता है चाहे टेलीविजन हो या अखबार या और कुछ एजेंडा सेटिंग, पेड न्यूज़ और फेक न्यूज़ के सहारे ऑडियंस को बेचा जाता है। इस सारे ताने-बाने में जन सरोकार कहीं हाशिए पर चले गए हैं। यही कारण है कि प्रसार संख्या और टीआरपी के खेल में क्राइम, क्रिकेट, सेलिब्रिटी, सनसनी और फूहड़ मनोरंजन से पूरा मीडिया पटा पड़ा है।

मीडिया को उसकी लोकतांत्रिक छवि में वापस लाने के लिए मीडिया शिक्षण से 'पैसिव पब्लिक' को 'एक्टिव पब्लिक' में बदलना जरूरी है। उसका इंटरवेंशन मीडिया को पुनः हस्तक्षेप की भूमिका में लेकर आएगा जोकि उसकी वास्तविक पहचान है।

बीज शब्द: वैश्वीकरण, हाशिए की आवाज, एजेंडा सेटिंग, बाय प्रोडक्ट, पेड न्यूज़, अन्ना आंदोलन, फेक न्यूज़।

भारत में लोकतंत्र स्थापित हुए सात दशक हो चुके हैं।लोकतंत्र का अर्थ केवल मताधिकार नहीं होता मताधिकार लोकतंत्र की अभिव्यक्ति तो है किंतु संपूर्ण लोकतंत्र का प्रतिनिधित्व नहीं है जैसे पाकिस्तान में मताधिकार का प्रयोग किया जाता है पर क्या वहां वास्तविक लोकतंत्र है?

लोकतंत्र की वास्तविक अर्थवत्ता समाज के अंतिम व्यक्ति तक संसाधनों, अवसरों की समानता व गरिमा पूर्ण जीवन में निहित है। विस्तृत और व्यापक जन भागीदारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का मूल तत्व है। भावी हिंदुस्तान में लोकतांत्रिक व्यवस्था का स्वरूप खींचते हुए 1946 में हरिजन सेवक अखबार में महात्मा गांधी ने लिखा था, "हर एक गांव में जम्हूरी सल्तनत या पंचायती व्यवस्था का राज होगा इसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी इसका मतलब है कि हर एक गांव को अपने पैरों पर खड़ा होना होगा। अपनी जरूरतें खुद पूरी करनी होगी ताकि वह अपना कारोबार खुद चला सके यहां तक कि वह वह सारी दुनिया से अपनी रक्षा खुद कर सके।उसे तालीम देकर इस हद तक तैयार

करना होगा कि वह बाहरी हमले के मुकाबले में अपनी रक्षा करते हुए मर मिटने के लायक बन जाए इस तरह हमारी बुनियाद आखिरी आदमी पर टिकी होगी।" ये पंक्तियां लोकतंत्र की मूल चेतना को रेखांकित करती हैं।

पत्रकारिता के आधुनिक स्वरूप यानी मीडिया का कार्य केवल घटनाओं का एकत्रीकरण कुशल प्रस्तुतीकरण और पाठकों तक उसका संप्रेषण नहीं है बल्कि उसकी बड़ी भूमिका हस्तक्षेप अर्थात् इंटरवेंशन की है। मानवाधिकार के प्रति जागरूक करना, खामोशी को तोड़ना, समकालीन चुनौतियों की सही पहचान कर उन्हें यथार्थ परक दृष्टि के साथ समाज तक संप्रेषित करना जनमत बनाना और समाज में रचनात्मक वातावरण तैयार करना है। इसी चारित्रिक विशेषता के कारण मीडिया को चौथे स्तंभ की संज्ञा दी गई।

भारत में पत्रकारिता की शुरुआत युगीन चेतना को वाणी देने जनता के आदर्शों एवं आकांक्षाओं को सच्चाई के साथ अभिव्यक्त करने के महत्व उद्देश्य से हुई 'हिंदुस्तानियों के हित के हेत' उद्देश्य के साथ 30 मई 1826 को पंडित युगल किशोर शुक्ल ने हिंदी के पहले साप्ताहिक'उदंत मार्तंड' का प्रकाशन करके हिंदी पत्रकारिता की नींव रखी।यह जीवटता उस युग के पत्रों में निरंतर विद्यमान रही। जिसे इन पत्रों के ध्येय वाक्य मैं आसानी से देखा जा सकता है।1913 में कानपुर से प्रकाशित गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' का ध्येय वाक्य ये पंक्तियां थी:

जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।

वह नर नहीं,नर पशु निरा है और मृतक समान है।

ऐसे ही विचार विद्यार्थी जी ने 'राष्ट्र की नींव' नामक अग्रलेख में अभिव्यक्त किए, "राष्ट्र महलों में नहीं रहता। प्रकृत राष्ट्र के निवास स्थल वे अगणित झोपड़े है जो गांव और पुरवों में फैले हुए खुले आकाश के देदीप्यमान सूर्य और शीतल चंद्र और तारागण से प्रकृति का संदेश लेते हैं।और इसलिए राष्ट्र का मंगल और उसकी जड़ मजबूत उस समय तक नहीं हो सकती, जब तक इन अगणित लहराते पौधों की जड़ों में जीवन की मजबूती का जल नहीं सींचा जाता। भारतीय राष्ट्र के निर्माण के लिए उसके गांवों और पुरवों में जीवन की ज्योति की आवश्यकता है। आवश्यकता है कि हम हाथ पैर और कान-नाक को भी मिठास की कल्पना करने का आमंत्रण दे जिसकी कल्पना हमारे मन में है? करोड़ों प्राणियों की जागृति के लिए हम आगे बढ़े और उन्हें आगे बढ़ावे जिनके बढ़ाने की शक्ति हमारे हाथों में है"। आज भारत में हिंदी समाचार पत्रों और उनके पाठकों की संख्या सबसे अधिक है। प्रसार संख्या में भी वे शीर्ष पर है लेकिन पत्रकारिता में वह बात नहीं जो उदंत मार्तंड युगीन पत्रों सामदंड मार्तंड, बंगदूत, समाचार सुधा वर्षण,सार सुधा निधि,भारत मित्र, उचित वक्ता, हिंदी बंगवासी, हरिश्चंद्र चंद्रिका,हिंदोस्थान, कवि वचन सुधा,ब्राह्मण,नृसिंह,अभ्युदय, विश्वामित्र, हरिजन,सत्याग्रह,सर्वोदय, यंग इंडिया, नवजीवन और मूकनायक आदि पत्रों में थी। प्रतिकूल परिस्थिति से लड़ने का अदम्य उत्साह उस समय के पत्रकारों की सामान्य विशेषता थी। सन 1878 में गवर्नर जनरल लॉर्ड लिटन ने भारतीय

भाषायी प्रेस पर नियंत्रण करने के उद्देश्य से 'वर्नाकुलर प्रेस एक्ट' लागू किया। इस दमनकारी अधिनियम का व्यापक विरोध हुआ। ब्रिटिश सत्ता का भारतीय प्रेस पर बार-बार अंकुश लगाने का प्रयास छपे हुए शब्द की अपरिमित शक्ति को रेखांकित करता है।पत्रकारिता की इसी जिम्मेदारी के प्रति आगाह करते हुए माखनलाल चतुर्वेदी ने कहा था, "समाचार पत्र संसार की एक बड़ी ताकत है तो उसके सिर जोखिम भी कम नहीं......... जगत में समाचार पत्र यदि बड़प्पन पाए हुए हैं तो उनकी जिम्मेदारी भी भारी है बिना जिम्मेदारी के बड़प्पन का मूल्य ही क्या है? और वह बड़प्पन को मिट्टी की मोल का हो जाता है जो अपनी जिम्मेदारी को नहीं संभाल सकता।"

आजादी के बाद देश के चहुमुखी विकास और उसमें जनसाधारण की भागीदारी एक बड़ी चुनौती थी। आजाद भारत में सरकार ने आर्थिक विकास और जनसंचार के साधन बढ़ाने पर जोर दिया जिससे प्रेस का विकास हुआ। 1952 में प्रेस आयोग बनाया गया इसका कारण था प्रेस को उसकी जिम्मेदारियों के प्रति सचेत रखना क्योंकि सरकार और नेता प्रेस की भूमिका और संवेदनशीलता से भली-भांति अवगत थे। लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति आस्था होने के कारण वे मानते थे कि आलोचनात्मक प्रेस लोकतंत्र का हिस्सा है इसलिए उस पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत आपातकाल के समय प्रेस पर सेंसरशिप लगाई गई, जिसकी रूपरेखा इंदिरा गांधी ने तत्कालीन सूचना प्रसारण मंत्री विद्याचरण शुक्ल, मोहम्मद यूनुस और संजय गांधी की मदद से तैयार की। सेंसर ऑफिस से दिशा निर्देश जारी किया गया जिसमें कहा गया कि सरकार विरोधी किसी भी खबर या आंदोलन के प्रकाशन की इजाजत नहीं दी जाएगी। संपादकीय जगहों को खाली छोड़ने या कोटेशन लिखने की इजाजत नहीं दी जाएगी। इस निर्देश के बावजूद राजेंद्र माथुर ने 'नई दुनिया' के संपादकीय पृष्ठ को विरोध स्वरूप खाली रखा। प्रबंधकों को भी उनके इस निर्णय के समक्ष झुकना पड़ा। टाइम्स ऑफ इंडिया के मुंबई संस्करण में तो आपातकाल के विरोध स्वरूप शोक संदेश कॉलम में शोक संदेश प्रकाशित किया गया। आपातकाल के दौरान फ्रीडम फर्स्ट, इंडियन एक्सप्रेस, ओपिनियन, हिम्मत और सेमिनार जैसी पत्रिकाओं के ऐसे पत्रकार और संपादक रहे जो मीडिया की सार्थक भूमिका निभाते रहे।

आजादी के बाद पत्रकारिता की बुनियादी संरचना और वैचारिक स्थिति में एक बड़ा बदलाव देखने को मिला। इसकी मूल वजह है यह मानी जाती है कि आजादी से पहले पत्रकारिता एक मिशन थी लेकिन आजादी के बाद भारतीय मीडिया और समाचार पत्र दोनों ही एक व्यवसाय के रूप में उभर कर सामने आए।अब मीडिया एक बिजनेस मॉडल में बदल चुका है। जहां सरकार के साथ खड़े हुए बिना लाभ नहीं बनाया जा सकता। पूंजी ने लाभ ही शुभ का वातावरण बनाया इस वातावरण में विचार और सरोकार गौण होते चले गए। संस्कारों का स्थान मनोरंजन ने ले लिया। इन्फोटेनमेंट के इस युग में मनोरंजन में भी फूहड़ता- अश्लीलता का बोलबाला है। जिसमें प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक दोनों ही मीडिया एक दूसरे से होड़ करते नजर आते हैं।

वैश्वीकरण आज के युग की बड़ी सच्चाई है। 1991 के बाद के समाचार पत्रों की बात करें तो उसकी अंतर्वस्तु में बदलाव आया है। जिससे अब पाठक उपभोक्ता, अखबार उत्पाद और संपादक प्रबंधक की भूमिका में आ गए हैं। 2014 में कुल 99360 प्रकाशन थे जिसमें से 40 प्रतिशत हिंदी में और 47 प्रतिशत क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित हुए। इनमें दैनिक प्रकाशन की संख्या 13530 है। अगर विज्ञापन को देखें तो अंग्रेजी अखबारों के मुकाबले भाषायी और हिंदी अखबारों की स्थिति में हुए परिवर्तन को आसानी से देखा जा सकता है।फिक्की केपीएमजी की रिपोर्ट के अनुसार 2014 में भारत में प्रिंट मीडिया का बाजार 26300 करोड़ रुपए का था जिसमें से 17600 करोड़ के विज्ञापन मिले थे। अनुमान लगाया जा सकता है कि पत्रकार और मैनेजमेंट दोनों खूब फल-फूल रहे हैं। यह शोध का विषय हो सकता है कि वैश्वीकरण से भारतीय पत्रकारों की स्थिति में कितना परिवर्तन आया है।

वैश्वीकरण, नई तकनीक और प्रौद्योगिकी के कारण मीडिया का प्रभाव बढ़ा है और साथ ही बाजार विज्ञापन भी बढ़े हैं परंतु व्यवसायिक दृष्टिकोण की प्रधानता के कारण उसकी प्रतिष्ठा में कमी आई है।पहले पत्रकारिता में पैसा बाय प्रोडक्ट था। अब उदारीकरण के बाद इस बाय प्रोडक्ट को प्रमुख मानकर मीडिया घरानों ने समाचारों का ही व्यवसायीकरण कर दिया है इसलिए जो छुटपुट भ्रष्टाचार था उसने संस्थागत रूप ले लिया। 2009 के लोकसभा चुनाव में सामने आया कि समाचार के बदले मीडिया संस्थान पैसा लेने लगे हैं। इस्सार समूह के खुलासे में तीन पत्रकारों को इस्तीफा देना पड़ा। राडिया टेप खुलासे में बरखा दत्त, वीर संघवी, राजदीप सरदेसाई जैसे अनेक नाम इसमें शामिल बताए गए। पेड़ न्यूज़ ने पत्रकार और जनसंपर्क अधिकारी का भेद समाप्त कर दिया।“पेड न्यूज़ ने ऐसे ही दो भेद और मिटाएं हैं। पहला भेद संपादक और मालिक का। दूसरा भेद है संपादक और प्रबंधन का। ज्यादातर मीडिया में प्रबंध संपादक का नया पद बन गया है। जो पत्रकारीय मर्यादाओं का वह फाटक है जो जब चाहता है तो बंद हो जाता है और जरूरत पड़ने पर खुल जाता है। वह पेड़ न्यूज का फाटक है।“ मीडिया एथिक्स पर यह एक बड़ा सवाल है। यह मीडिया के बाजार बनने का परिणाम है। इस मसले को अमेरिका के संदर्भ में नोम चोमस्की अच्छी तरह समझाते हैं। वे लिखते हैं कि मास मीडिया लोगों को डायवर्ट कर रही है। वे प्रोफेशनल स्पोर्ट्स, सेक्स स्कैंडल या फिर बड़े लोगों की व्यक्तिगत बातों को जमकर सामने रखती है।क्या इससे इतर और कोई गंभीर मामले ही नहीं होते। सभी बड़े मीडिया घराने एजेंडा सेटिंग में लिप्त हैं। अमेरिका के न्यूयार्क टाइम्स और सीबीएस ऐसे मामलों के बादशाह है। उनका कहना है कि अधिकतर मीडिया इसी सिस्टम से जुड़े हुए हैं। संस्थानिक ढांचा भी कमोबेश उसी तरह का है। न्यूयॉर्क टाइम्स एक कॉपरेशन है और वह अपने प्रोडक्ट बेचता है। उसका प्रोडक्ट ऑडियंस है। वे अखबार बेचकर पैसा नहीं कमाते वे वेबसाइट के जरिए खबरें पेश करके खुश हैं वास्तव में जब आप उनके अखबार खरीदते हैं तो पैसे खर्च कर रहे होते हैं लेकिन चूंकि ऑडियंस एक प्रोडक्ट है इसलिए लोगों के लिए उन लोगों से लिखवाया जाता है जो समाज के टॉप लेवल नियति नियंता है। आपको अपने उत्पाद बेचने के लिए बाजार चाहिए और बाजार आपका विज्ञापनदाता है चाहे टेलीविजन हो या अखबार या और कुछ आप ऑडियंस को बेच रहे होते हैं।“कमोबेश भारत में भी मीडिया की यही स्थिति होती जा रही है।आज के दौर में चाहे सरकार हो या

विपक्ष या फिर सिविल सोसायटी के सदस्य हर कोई एजेंडा सेट करने में लगा है। देशद्रोह, जेएनयू, अखलाक,कन्हैया, रोहित वेमुला, लोकपाल, भ्रष्टाचार आंदोलन,चुनाव, विदेशी मीडिया, कॉमनवेल्थ गेम्स घोटाला, 2जी स्पेक्ट्रम मामला, कोयला आवंटन मामला आदि ऐसे मामले हैं जिनके जरिए विभिन्न रूपों में एजेंट सेटकिए गए। क्योंकि हर मामले में चाहे न्यूज़ चैनल हो या फिर अखबार हर जगह पर जमकर बहस हुई और मीडिया की नई भूमिका को लोगों ने देखा कि किस तरह आरोपी और आरोप लगाने वाले एक ही मंच पर अपनी सफाई दे रहे थे। यहीं से सवाल उठता है क्या मीडिया की भूमिका एजेंडा सेट करने के लिए होती है? भारतीय मीडिया पूरी तरह से इसकी चपेट में है अखबारों की हेडलाइंस के आकार, खबरों का आकार और प्लेसमेंट मीडिया एजेंडा का कारक होता है तो वहीं टीवी चैनलों में खबरों की पोजीशन और लंबाई उसकी प्राथमिकता और मेहता को तय करती है। इस संबंध में आनंद प्रधान का मानना है कि इन दैनिक चर्चाओं में उस दिन के सबसे महत्वपूर्ण खबर या घटनाक्रम पर चर्चा होती है लेकिन आमतौर पर यह चैनल की पसंद होती है कि वह किस घटना पर प्राइम टाइम चर्चा करना चाहता है। लोकतंत्र में ऐसी चर्चाएं कई कारणों से महत्वपूर्ण होती हैं यह चर्चाएं ना सिर्फ दर्शकों को घटनाओं व मुद्दों के बारे में जागरूक करती हैं और जनमत तैयार करती है बल्कि लोकतंत्र में वाद संवाद और विचार विमर्श के लिए मंच मुहैया कराती हैं। न्यूज़ मीडिया इन चर्चा और परिचर्चाओ. के जरिए ही कुछ घटनाओं और मुद्दों को आगे बढ़ाते हैं और उन्हें राष्ट्रीय या क्षेत्रीय एजेंडे पर स्थापित करने की कोशिश करते हैं। इसका प्रभाव तत्काल दिखाई नहीं देता लेकिन यह दूरगामी होता है। वालग्रेव और वॉन एलिस्ट ने भी कहा है कि एजेंडा सेटिंग का मतलब यह नहीं होता कि उसके प्रभाव स्पष्ट दिखने लगे यह टॉपिक मीडिया के प्रकार और इसके विस्तार के सही समुच्चय के तौर पर सामने आता है।

वर्तमान में भारतीय न्यूज़ चैनलों की खबरों का विश्लेषण करें तो महसूस होता है कि पूरा का पूरा मीडिया एजेंडा सेटिंग और गेटकीपिंग सिद्धांत में उलझकर रह गया है। ट्रायल और ट्रिब्यूनल को किस तरह मीडिया पेश करते हैं यह बात किसी से छुपी हुई नहीं है। मीडिया का मूल सवाल खड़े करना है लेकिन यह एजेंडा तब हो जाता है जब सवाल के जरिए किसी एजंडे को खड़ा करते हैं, भ्रष्टाचार के विरोध में खड़ा हुआ आंदोलन, जेंडर की समानता को लेकर चलाया गया कैंपेन और सूचना का अधिकार आदि अच्छी एजेंडा सेटिंग भी ऐसे ही उदाहरण हैं। मीडिया में इतनी ताकत होती है कि वह किसी भी मसले को हमारे दिमाग में भर देता है जैसे अन्ना आंदोलन को लेकर जो नॉन स्टॉप कवरेज टीवी चैनलों के द्वारा किया गया उसने हर किसी को यह सोचने के लिए विवश किया कि कौन सा राष्ट्रीय मसला महत्वपूर्ण है। एजेंडा सेटिंग तीन तरीके से होती है- मीडिया एजेंडा जो मीडिया बहस करता है दूसरा पब्लिक एजेंडा जिसमें व्यक्तिगत तौर पर लोग बातचीत करते हैं तीसरा पॉलिसी एजेंडा जिसे लेकर पॉलिसी बनाने वाले विचार करते हैं। जहां पेड न्यूज़ तो पैसे कमाने का साधन मात्र है वहीं मीडिया एजेंडा तो पूरे तंत्र को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। इसके दायरे में सिर्फ आर्थिक संसाधन नहीं आते बल्कि पूरे लोक की सोच और समझ के साथ नियति निर्धारकों का मंतव्य भी जुड़ा हुआ है।

एजेंडा सेटिंग हो या फिर पेड न्यूज़ दोनों ही जनता के साथ बहुत बड़ी धोखाधड़ी है पंजाब में एक खबर में बताया जाता है कि अमुक व्यक्ति चुनाव हार रहा है और उसी अखबार में पेड न्यूज़ में उसे चुनाव जीता हुआ बताया जाता है।आए दिन ऐसे अनेक प्रसंग देखने को मिल जाते हैं। इस अन्तर्विरोध ने मीडिया की विश्वसनीयता पर प्रश्न लगाया है। पेड न्यूज़ पेट न्यूज़ बन गई है जो मीडिया के विकृत रूप को ही प्रकट करती है।

आज जब मुख्यधारा की मीडिया सत्ता सहित सामाजिक न्याय की कुटिलता और पूंजी के बाजार की ताकतों के गठजोड़ से नियंत्रित हो रही है ऐसे समय में डिजिटल मीडिया जन-जन की आवाज बंद कर मुख्यधारा के मीडिया का विकल्प बनकर तेजी से उभर रहा है अन्ना आंदोलन से इसे सशक्त जनमाध्यम के रूप में पहचान मिली। मुख्यधारा के मीडिया का पाठक/ दर्शक/ श्रोता अब सृजक की भूमिका में आ गया है। भारतीय मीडिया में शोषित वर्ग अर्थात हाशिए के समाज को बहुत कम जगह दी जाती है। किसान जैसे संवेदनशील मुद्दे सामाजिक न्याय, महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा और जनसरोकारों से जुड़े मुद्दे नहीं दिखाई जाते वे अब खुलकर सामने आने लगे हैं। फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम व ब्लॉग के जरिए सूचना का लोकतांत्रिकरण हुआ है,यह एक अच्छा संकेत है ।परंतु तथ्यों की प्रामाणिकता का सवाल यहां बना हुआ है।चुनावी समीकरणों को प्रभावित करने,अफवाह फैलाने से लेकर दंगों तक में सोशल मीडिया की भूमिका प्रश्नों के घेरे में आ चुकी है। फेक न्यूज़ की संख्या बढ़ती जा रही है जो अंधविश्वास और भ्रम को बढ़ावा देती है। पालघर की घटना जिसमें फैलाया गया कि संत बच्चों को अगवा करते हैं और इसके परिणामस्वरूप भीड़ ने उन्हें मार दिया। मुंबई के मजदूरों का (लोकडाउन के समय)बांद्रा रेलवे स्टेशन पहुंचना। इसी प्रकार यह सूचना की विशेष बसें चलाई जा रही है जो लोगों को मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में ले जाएंगी। हजारों की संख्या में लोग पहुंच गए और उन्हें मुश्किल से वापस भेजा गया। फेक न्यूज़ का शिकार गरीब हो रहा है क्योंकि उसके कारण ही उत्तर पूर्व से छात्रों का पलायन हुआ कोविड-19 के दौरान फेक सामग्री की मात्रा इतनी बढ़ गई कि इसे इंफोडमिक कहा जाने लगा है।

अस्तु मीडिया ने आजादी के बाद से अब तक सकारात्मक और नकारात्मक दोनों भूमिकाएं निभाई हैं। परंतु मीडिया से अधिक सार्थक भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है ,तभी वह लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की भूमिका का निर्वाह कर पाएगा। इसके लिए जहां एक ओर प्रेस परिषद को व्यापक बनाने की जरूरत है वही मीडिया साक्षरता जैसे कार्यक्रमों की भी जरूरत है। मीडिया शिक्षण से मीडिया को समाज की पहुंच में लाया जाए ताकि उनका प्रयोग जनहित में किया जा सके और आम आदमी केवल मीडिया का उपभोक्ता बनकर न रह जाए मीडिया प्रोडक्शन का हिस्सा भी बने। उसकी सक्रिय भागीदारी ही मीडिया के वर्तमान चरित्र को बदलेगी। ।

संदर्भ सूची

मीडिया बाजार और लोकतंत्र, पंकज बिष्ट -भूपेन सिंह, शिल्पायन, संस्करण 2012

पत्रकारिता का आपातकाल, अमरेंद्र कुमार रॉय, प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2010

भारतीय प्रेस 1955 से अब तक, शंकर भट्ट, प्रकाशन विभाग

भारत में पत्रकारिता,आलोक मेहता,नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, पहला संस्करण 2006

नेसेसरी इल्युजंस : थॉट कंट्रोल इन डेमोक्रेटिक सोसाइटीज, नोम चोमस्की,प्लूटो प्रेस, लंदन

साहित्य अमृत, मीडिया विशेषांक, अगस्त 2015

नया ज्ञानोदय, मीडिया विशेषांक, जनवरी 2010

हंस न्यू मीडिया सोशल मीडिया विशेषांक, सितंबर 2018

फिक्की के पी एम जी की रिपोर्ट 2014